भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संग पत्रिका

वर्ष-18, अंक-3 सोमवार, 26.3.95	सम्पादक : प्रभाकर राव मार्च, 1995	वार्षिक चन्दा-50.00 प्रति अंक : 5.00

ओहो ! धरती पर श्रीजी महाराज का प्रागट्य.....

पृथ्वी पर अधर्म का शक्ति बढ़ रही थी.....चारों ओर भ्रष्टाचार, अराजकता का वातावरण फैला था। धर्म की आड़ में अनेक कुरीतियाँ पनप रहीं थी..... बनावटी, ढोंगी लोगों ने साधु के वेश में आम जनता में लूट खसोट मचा रखी थी,हिंसा बढ़ रही थी। उसी समय जीवों पर दया करके भगवान स्वामिनारायण मानव रूप में धरती पर अवतरित हुए।

अयोध्या के निकट छपैया नामक एक छोटा गांव है। चैत्र शुक्लानौमी के महामंगलकारी दिन सं. 1837 सोमवार रात को दस बजे पूर्ण पुरूषोत्तम महाराज के रूप में धरती पर मानवस्वरूप में प्रगट हुए। पिता का नाम धर्मदेव और माता का नाम भक्तिदेवी। भगवान तो हमेशा धर्म और भक्ति की गोद से ही प्रगट होते हैं न !

जगत के बने नियमों के मुताबिक पिता धर्मदेव ने घनश्याम की जन्मकुंडली बनवाने मार्कंडेय मुनि को घर पर बुलाया.....मार्कंडेय मुनि ने जैसे ही घनश्याम की उंगली के पोरें गिने, तो गिनते ही उनकी आंखे चौकन्नी हो गई और बोले-'**इसका भविष्य मैं भला क्या कह सकता हूँ? यह स्वयं सब के भविष्य एवं भूत-वर्तमान का स्वामी है। जगत में इसकी पहचान ऐसे रूप में होगी, जिस रूप में आज तक सारे विश्व में किसी की पहचान नहीं हुई है। कोई इसे हरि कहेगा, कोई इसे कृष्ण कहेगा। घनश्याम तो यह हैं ही। तप, त्याग और प्रभाव से यह नीलकण्ठ वर्णी कहलायेगा। और.... कहते हुए मेरी जीभ रूक जाती है क्योंकि ऐसा भविष्य आज तक मैंने न देखा है, न सुना है। यह बालक पृथ्वी पर सद्धर्म का स्थापन करेगा, अधर्म का उच्छेद करके लोगों के दुःख दूर करेगा, सब को सन्मार्ग की ओर अग्रसर कर सुखी करेगा। जगत के सभी खण्डों में इसकी जय जयकार होगी।**' जब भक्तिदेवी ने कहा- 'महाराज! इस बालक को आप आशीर्वाद दीजिए।' मुनिमहाराज बोले- **मैं भला इसको क्या आशीर्वाद दे सकता हूँ, मैं स्वयं इसके आशीर्वाद का भिक्षुक हूँ।**

घनश्याम की अलौकिक प्रतिभा बचपन में ही छुपी न रह पाई। एक बार धर्मदेव और भक्तिमाता बालक घनश्याम को गोद में लेकर बैठे थे। धर्मदेव के मन में अकस्मात् यह विचार आया कि मार्कंडेय मुनि ने यह जो कहा था कि इस बालक की पृथ्वी के सभी खण्डों में जय जयकार होगी। यह भविष्यवाणी किस प्रकार सिद्ध होगी ? जय जयकार या दिग्विजय शस्त्र से या धन से या ज्ञान से होती है। राजा- महाराजा अस्त्रशस्त्रों से दिग्विजय होते है। शाह सौदागर धन से दिग्विजय प्राप्त करते हैं। साधु सन्त अपनी विद्या से अपने ज्ञान

से दिग्विजय प्राप्त करते हैं। इस बालक की जय जयकार किस साधन से होगी यह जान तो लें।

इसके लिए उन्होंने एक योजना बनाई। उन्होंने एक पीढ़े पर छुरी, सोना मुहर और गीता-ये तीन चीजें रखी, जिन में अनुक्रम से शस्त्र, धन एवं ज्ञान का समावेश हो गया! घनश्याम को उस पीढ़े के पास बिठा दिया। बालक घनश्याम तीनों चीजों को देखते रहे। सामान्यतया बालक चमकती हुई चीज की ओर ही आकर्षित होते हैं, इस बालक ने चमकती हुई चीजों शस्त्र- छुरी एवं सोना मुहर की ओर ताका तक नहीं और उसने अपने छोटे हाथों से गीता उठा ली। न केवल गीता उटा ही ली, बल्कि उसे खोलकर एकात्मकतापूर्वक ऐसे उंगली घुमाने लगा मानो वह मन ही मन उसे पढ़ रहा हो। धर्मदेव विद्धान थे, उनकी विद्वत्ता काशी तक प्रसिद्ध थी। उन्होंने कुतूहल से अपने बच्चे के द्वारा खोला हुआ पन्ना देखा। उनके आश्चर्य का पार न रहा, उस पन्ने पर भगवान के ये वचन थे-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

धर्मदेव और भक्तिमाला आश्यर्चचकित होकर अपने बालक की ओर देख रहे थे। उस वक्त उस बालक ने सुमधुर स्मित किया। उस स्मित को देखते ही धर्मदेव और भक्तिमाता अपना होश मानो खो बैठे। वे भूत, वर्तमान और भविष्य को मानो भूल गए। उनके चारों ओर अपने बच्चे का वह स्मित ही दिखाई देने लगा। वे समझ गए कि यह मधुर स्मित त्रिलोक विजेता साबित होगा। विश्व में इसी मधुर स्मित की ही जय जयकार होगी। यही स्मित दुष्ट- दुर्जनों का विनाश करेगा, यही स्मित साधु संतों की रक्षा करेगा और यही स्मित विश्व में धर्म की स्थापना करेगा।

केवल 49 वर्ष ही महाराज स्थूल देह से पृथ्वी पर रहे। इतनी कम आयु में भी उन्होने भव्य कार्य जैसे 500 परमहंसों को दीक्षा, वचामृत-शिक्षापत्री जैसे शास्त्रों की रचना, भव्य मंदिरों का निर्माण... प्रभु के अलावा और किसी के द्वारा यह कार्य संभव हो भी कैसे सकता है? इससे भी अधिक महाराज ने मानवजाति पर कल्पना से परे की बेमिसाल- अकारण करूणा बरसाई कि अपनी पारमेश्वरी चेतना गुणातीत स्वरूप द्वारा अखंड अमर रखकर गुणातीत भावना को सदाकाल के लिए मूर्त कर दी। महाराज द्वारा दिए गए इस अनुपम वरदान के लिए समग्र मानवजाति युगों-युगों तक ऋणी रहेगी। स्वामिनारायण की यह बेमिसाल विशेषता है। महाराज ने बाहरी समाज में पनप रहे सती प्रथा, बालहत्या, गौहत्या, ढ़ोंग, आडम्बरों आदि को छुड़वाने का तो भरसक् प्रयत्न किया ही पर विशेष....महाराज पृथ्वी पर सिर्फ धर्म की स्थापना करने ही नहीं आये थे बल्कि जीव के स्वभाव का, प्रकृति का मूल परिवर्तन करना-उनका मुख्य उद्देश्य था।

महाराज ने सभी को केवल उपदेश मात्र नहीं दिए बल्कि हर एक का निजी बनकर, प्रेम से उनके जीवन में स्थान लिया और प्रभु के मार्ग की ओर अग्रसर किये। भक्त भी उनके साथ अत्यधिक प्रीति से जुड़ गये थे.....निम्नलिखित प्रसंग महाराज द्वारा दिए गए उपद्शों, महाराज के समय में भक्तों के अद्भुत सेवा, निष्ठा, समपर्ण के उत्कृष्ट उदाहरण हैं जो आज भी स्वामिनारायण सम्प्रदाय के हर एक आश्रित के लिए प्रेरणारूप हैं.....

एक बार गढडा में महाराज सभा में बात करते हुए बोले- भागवत् में भगवान ने कहा है कि - 'सत्संग के द्वारा मैं जैसा वश होता हूँ, ऐसा और किसी साधन से वश नहीं होता। इसलिए मैं इस सत्संगियों की सभा को महत्वपूर्ण समझता हूँ। आप सब हरिभक्तों को मैं विशेष प्रकाशवान देख रहा हूँ। मेरे इस कथन में थोड़ा-सा भी असत्य का अंश नहीं है, यह बात मैं संतों की सौगंध लेकर कहता हूँ।'

सभा में बैठे भक्तराज उका खाचर ने यह सुना तो निश्चय कर लिया कि संतों एवं हरिभक्तों की सेवा करेंगे, दूसरी झंझट से हम मुक्त रहेंगे। सो उका खाचर एवं उनकी पत्नी दोनों संतों और हरिभक्तों की सेवा में संलग्न हो गये। महाराज और सन्तगण तड़के उठकर शौच स्नानादि के लिए जब नदी पर जाते तो उका खाचर और उनकी पत्नी पहले जल्दी ही उठकर झाडू लेकर दरबारगढ़ से नदी के घाट तक का पूरा रास्ता साफ स्वच्छ कर देते थे। रास्ते में पड़े कंकड़, पत्थर और कॉटे उठाकर किनारे डाल देते थे। यह दैनिक क्रम हो गया था। सभी स्वच्छ रास्ते से जाते-आते प्रसन्न

होकर मन से ही वे रास्ता साफ करने वालों पर आशीर्वाद की वर्षा करते। कुछ ही दिन में सब को इस बात का पता चला कि उका खाचर व उनकी पत्नी तड़के उठकर यह सफाई का काम करते हैं। फिर जब कई लोगों ने उनको कहा कि रास्ता तो प्रायः साफ ही रहता है, तड़के उठकर इसके लिए आप क्यों परेशान होते हैं? उका खाचर ने उत्तर दिया कि आपकी बात सही है, रास्ता साफ ही होता है, परन्तु हमें झाडू मारने की आदत पड़ गई है। बिना यह काम किये हमें चैन ही नहीं पड़ता। हम लोग अनपढ़ हैं, इसके सिवा दूसरा काम भी क्या करें।

ऐसा ही भक्तराज उका खाचर का दूसरा प्रसंगः- महाराज के रहने के स्थान अक्षर ओरडी के पास एक नीम का वृक्ष था। उस के नीचे एक चबुतरा बना था, जिस पर अकसर महाराज बैठते थे। एक बार उस चबुतरे को कुत्ते ने गन्दा किया था। कई हरिभक्तों ने उसे देखा और कहा कि कितनी गंद ! सभा के समय आज महाराज कहां बिराजेंगे? वगैरह - वगैरह.... लेकिन सभी को ऐसा रहा कि पहले महाराज के दर्शन जरूरी हैं फिर बाद में इसका हल ढूंढेंगें।

उका खाचर नदी पर स्नान करके महाराज के दर्शनार्थ जा रहे थे। उनकी दृष्टि उस चबूतरे पर पड़ी। वे तुरंत दौड़े, झाडू और पानी लेकर मिनटों में उन्होंने वह चबूतरा साफ - सुथरा कर डाला। फिर दोबारा स्नान करके महाराज के दर्शन के लिए पहुँच गए। महाराज तभी हरिभक्तों को पूछ रहे थे कि उका खाचर जो समय पर हाजिर हो जाते हैं, वे आज अभी तक क्यों नहीं आए ? और महाराज ने उनके पहुँचते ही कहा-'भगत ! रोज तो तुम समय पर आते हो, आज इतनी देर क्यों?' आलसी हो गए या सूर्यवंशी हो गए हो ? इतने में एक हरिभत ने उठकर सारी कहानी बताई कि किस तरह वे गंदगी साफ कर के आए हैं। महाराज अति प्रसन्न होकर अपने आसन से उठ खड़े हुए, उका खाचर को गले लगाया और बोले - **'इसी का नाम भक्ति ! इसी का नाम सेवा। उका भक्त को किसी ने भी नहीं कहा था कि तुम यह काम करो, न ही उसने किसी से पूछा कि मैं यह करूं? उन्होंने स्वयं सेवाकार्य खोज लिया। संतों की सेवा करने का उनको व्यसन ही हो गया है। सो उसके दिल की सभी बुरी वासनाओं का नाश हो जाएगा.....'**

उका खाचर को थोड़ी सेवा के फलस्वरूप ही कितने आशीर्वाद मिल गये और यह प्रसंग यही दर्शाता है कि **भक्त को सेवा की ऐसी तान होनी चाहिए। ऐसी सेवा से भगवान वश हो जाते हें।**

दूसरी ओर भगवान केवल सेवा ही नहीं, बल्कि भावना के वश होते हैं जो इस प्रसंग से पता चलता हैः-

लांघणज गांव की सोनबाई को एक भावना थी कि महाराज और कुछ संतों को अपने घर बुलाकर भोजन करवाऊं। सो उसने महाराज को आमंत्रित किया। महाराज ने उसका स्वीकार भी किया। सोनबाई प्रसन्न होकर घर आई और भोजन की तैयारी करने लगी।

सोनबाई के नजदीक ही गंगाबाई नामक एक दूसरी बाई रहती थी। वह ब्राह्मण भी थी और धनवान भी। उसको भी महाराज के प्रति अत्यधिक श्रद्धाभक्ति थी। जब उसे महाराज के सोनबाई के घर आने का पता चला तो वह तुरन्त सोनबाई के घर गई और बोली-'तू कैसे महाराज को खिलाएगी?' तेरे पास क्या अच्छे गेहूँ, चावल आदि हैं? यह बात सोचकर सोनबाई उदास हो गई और बोली क्या करूँ?' गंगाबाई बोली -'मैं मेरे घर से महाराज के लिए रसोई बनाकर ले आऊंगी और तू हरिभक्तों को अपने अनाज से रसोई खिलाना। सोनाबाई ने हाँ भर दी, पर इस आयोजन से उसका दिल संतुष्ट नहीं था।'

जिस दिन महाराज सोनबाई के घर आने वाले थे उस दिन सोनबाई रसोई करती-करती आंसूओं से निवेदन करती रही-'महाराज! आप उत्तमोत्तम हैं, आपको सब श्रेष्ठ ही अर्पण करना चाहिये, यह मैं स्वीकार करती हूँ। लेकिन मेरे पास तो यही उत्तमोत्तम है। मेरा यह उत्तमोत्तम क्या आप नहीं स्वीकारेंगे !'

महाराज जब सोनबाई के घर आए तो उसे उदास देख उन्होंने पूछा तो सोनबाई ने कहा - 'मैंने भावपूर्वक आप के लिए यह रसोई बनाई है, क्या आप वह नहीं खायेंगे ?' महाराज मुस्कुराहट के साथ बोले - 'वाह ! वही खाने के लिए तो हम यहां आए हैं। तब सोनबाई ने निःसंकोच कहा आप उत्तमोत्तम पुरूष हैं। आपको उत्तमोत्तम भोजन परोसना चाहिए। मेरे पास तो हलके गेहूँ, चावल, दाल हैं।' तब महाराज बोले - जिसमें ऐसी उत्तमोत्तम निष्ठा हैं, उसका अनाज हल्का कैसे हो सकता है ?

महाराज ने वह रसोई खाई और तारीफ करते जा रहे थे–'क्या रसोई बनाई है, ऐसी रसोई तो आज ही खाई !' बाद में गंगाबाई अपना थाल लेकर पहुँची और बोलीः- 'महाराज ! आपके लिए सर्वोतम गेहूँ, चावल, दाल आदि की रसोई ब्राह्मण द्वारा बनवाकर मैं लाई हूँ।' महाराज ने उसके सामने देखे बिना कह दिया - 'मैंने भोजन कर लिया। सोनबाई की रसोई मुझे बहुत पंसद आई।' इसलिए मैंने आज भरपेट खाया। फिर महाराज गंगाबाई को बोले कि 'यह रसोई मेरा प्रसाद समझकर दोनों खा लो।' इस प्रकार महाराज ने दोनों महिलाओं का मन एक कर दिया। साथ-साथ गंगाबाई को जो पाठ पढ़ाना जरूरी था, वह भी सिखाया कि **मन की उत्तमोत्तम भावना भी महाराज का उत्तमोत्तम नैवेध है।**

उस दिन संतों, हरिभक्तों को महाराज ने कहा– **'जो अपना कल्याण चाहता हो, उसको चाहिये कि वह- मैं धनवान हूँ, मैं रूपवान हूँ, मैं पण्डित हूँ, ऐसा किसी भी प्रकार का अभिमान न रखें। गरीब सस्संगी हो उसका भी दासानुदास बनकर रहना चाहिये। अभिमान से ईर्ष्या और क्रोध पैदा होते हैं। इसलिए मान - अपमान से बचना जरूरी है।'** इस प्रकार उपदेश देकर महाराज ने भावना भी ग्रहण करी।

महाराज ने हरिभक्तों की सेवा ग्रहण करी, भावना ग्रहण करी और लाड़ भी लड़ाए पर दूसरी ओर उन्होंने भक्तों को सत्संग का हार्द बताने में, कुछ स्पष्ट कहने तनिक भी हिचक नहीं रखी। वह इस प्रसंग द्वारा निहारें–

एक बार महाराज कच्छ भुज में थे। वहां उनके दर्शनार्थ कई भक्त आए थे। कुछ दिन वहां रहने के बाद उन्होंने महाराज से विदा मांगी। विदा मांगते हुए सब ने हाथ जोड़ कर महाराज को कहा–'हम पर दया रखियेगा।' प्रत्युत्तर में महाराज ने कहा–'हम पर भी आप लोग दया रखियेगा।' हरिभक्त चलने लगे। चलते-चलते हरिभक्तों विचार आया कि 'महाराज ने हमको ऐसा क्यों कहा कि 'हम पर दया रखियेगा।' यह सोच वे हरिभक्त वापिस आये और महाराज को पूछा– 'महाराज ! आपने हमको ऐसा क्यों कहा कि 'हम पर तुम लोग दया करना। हम लोग आप पर क्या दया रख सकते हैं? दया करने के अधिकारी तो आप हैं, हम नहीं।' महाराज ने कहा 'दया करने का, रखने का तुम्हारा अधिकार क्यों नहीं। सुनो, समझाता हूँ। **साढ़े तीन हाथ का यह शरीर है। उसमें मुट्ठीभर का हृदय है। उसमें मेरा निवास है। मेरा वह निवास यदि सुखद बनाना हो तो आपका फर्ज़ है कि आप उस हृदय को स्वच्छ और पवित्र रखें। इसलिए तुम लोगों को कह रहा हूँ कि उस हृदय को- दिल को शुद्ध, स्वच्छ रखना। उसमें आप लोग संसार की तुच्छ वासनाओं को किसी तरह घुसने न दें। अन्यथा मैं वहां नहीं रह सकूंगा, इसलिए मैंने आप लोगों से कहा कि–'आप लोग भी मुझ पर दया रखियेगा।'**

ये शब्द केवल भुज के उन भक्तयात्रियों के लिए ही नहीं है अपितु समस्त हरिभक्तों को लक्ष्य करके कहे गये हैं। ये शब्द केवल उस वक्त के लिए नहीं, सदाकाल के लिए है। आज भी भक्त के हृदय में विराजमान महाराज यही कह रहे हैं कि **'मुझ पर दया रखना, मेरे निवास स्थान रूप अपने हृदय में सांसारिक स्थूल कामनाओं को घुसने न देना।'**

तो आईये। इस बार **9 अप्रैल, रविवार** को आ रही रामनवमी महाराज के प्रागट्यदिन पर ऐसे **'भक्त'** बनने का संकल्प करें.....

✡✡✡✡✡

अनिर्देश की गतिविधियाँ

❋ 7 मार्च, 1995.....मंगलवार की शाम को गुरुहरि ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी महाराज के स्वधामगमन दिन निमित्त स्मृत्तियां करने 'अनिर्देश' में भजन संध्या का कार्यक्रम रखा था। इस अवसर पर विशेष रूप से पधारे प.पू. पप्पाजी की उपस्थिति ने सभी भक्तों को भावविभोर कर दिया। प.भ. राकेशभाई, प.भ. विनोदभाई (पंजाब), नए ही परिचय में आए प.भ. जैन साहब, पू. ऋषिभाई ने प.पू. काकाजी के ही जीवन से सम्बन्धित निरन्तर भजनों की हार माला गाकर सभी को प.पू. काकाजी की मूर्ति की स्मृतियों में झबो दिया..... इसके पश्चात् पू. गुरुजी ने आशीष याचना करते हुए बात की–'भगवान् कृष्ण पर एक किताब Darling of Humanity लिखी गई है....

वैसे ही पू. काकाजी के बारे एक Sentence में कहा जाए तो वे Darling of Gunatit Samaj हैं। पू. काकाजी ने समग्र जीवन हमारे लिए जीया। महाभारत का एक प्रसंग है कि भगवान् कृष्ण व अर्जुन द्वारा खांडवप्रस्थ की समस्या अत्यधिक सूझबूझ व कुशलता से सुलझाने पर इन्द्र बहुत खुश हो गए और उन्होंने कृष्ण व अर्जुन को कुछ भी मांगने खूब आग्रह किया..... अर्जुन ने मांगा कि मुझे दैवी अस्त्र दे दीजिए जिससे कोई मुझे जीत ना पाए.... फिर कृष्ण ने मांगा कि **'अर्जुन के प्रति मेरी प्रीति शाश्वत् रहे।'** पू. काकाजी का सारा जीवन ऐसा ही रहा– हमने चाहे उनसे प्रीति रखी या नहीं रखी, पर वे हमारे लिए भजन करते रहे कि इनका व हमारा संबंध पक्का रहे.....

पू. काकाजी के शरीर छोड़ने के बाद मैं खूब डूब गया था तो पू. पप्पाजी मुझे खास छोड़ने बड़ौदा स्टेशन तक आए। तब मैं पू. काकाजी के विचार में से निकल कर बड़ौदा से रतलाम तक यही सोचता रहा कि पू. पप्पाजी मुझे क्यों छोड़ने आए? असल में यह मेरे प्रति उनका प्रेम कहो–attachment कहो या मुझे सदमे के कुएं से निकालने उनका एक चरित्र कहो.....

.....हमारा बचपना और अत्यधिक चौधरीपन इस रास्ते बाधारूप बनता है। स्वरूपों के पास हम सरल रहें। हमारा पुराना ढांचा बदल दें और आपका हमें सम्यक भरोसा आ जाए।

तत्पश्चात् प.पू. पप्पाजी ने आशीर्वाद बरसाये कि **'काकाजी अन्तर्धान नहीं हुआ है। Physical देह से अन्तर्धान हुआ है लेकिन तत्त्व से गुरुजी, दिनकरभाई और तारदेव के भाईयों, बापू आदि में प्रगट व प्रत्यक्ष हैं। पू. काकाजी की शास्त्रीजी महाराज के प्रति ऐसी समर्पण की भावना थी कि 100% खुद को बेचकर भी शास्त्रीजी महाराज के प्रति क्या नहीं हो सकता.....'**

❋ 16 मार्च, 1995 गुरुवार की शाम को ब्र.स्व. भगतजी महाराज के प्रागट्यदिन के निमित्त 'अक्षरज्योति' बहनों के आश्रम के स्थान पर पू. गुरुजी ने 'होलकिा दहन' का प्रोग्राम रखवाया। प.भ. मूलचंदजी ने अत्यधिक परिश्रम करके बहुत सुन्दर कलात्मक ढंग से 'होली' सजाई थी। बहनों द्वारा होली के चारों ओर कामना, क्रोध, इर्ष्या, जुआ, लॉटरी, अहंकार, लोभ, दगा-प्रपंच, नशे के बड़े-बड़े चित्र बनवा कर लगवाए....

पू. गुरुजी ने सभा में बात की–होली का त्यौहार यानि गीता के श्लोक की स्मृति का दिन..... **'न में भक्तः प्रणश्यति'**–मेरे भक्त का नाश नहीं होगा। हम सब यह सुनते हैं, परन्तु ऐन मौके पर हमारी धीरज नहीं रहती। भक्त प्रहलाद् की अग्नि से रक्षा हुई। भक्त प्रहलाद को जब उनके पिता ने गरम लाल खम्बे से चिपटने कहा तो प्रभु ने प्रहलाद को खम्बे पर चल रही चीटियों का दर्शन करा कर तसल्ली दी कि तुझे कुछ नहीं होगा। तू खम्बे से गले लग जा। हमे ऐसे 'भक्त' होने चाहिए। प्रभु पर हमारा अटूट विश्वास होना चाहिए। पृथ्वी पर मानवस्वरूप में विचरण कर रहे प्रभु के तत्व को पहचानें–वह 'भक्त।'

कोई भी घटना बने, तो हमारा मन तुरन्त प्रभु का ही सहारा ढूंढे ..... पू. काकाजी कहते थे नौ बम्बा-वाला को याद करो... स्वरूप की स्मृति सहित स्वामिनारायण... स्वामिनारायण.... अपना ज्ञान प्रगट का है। प्रभु को केवल स्टैपनी Spare wheel की तरह use ना करें। द्रौपदी की तरह आखिरी समय पर पुकार न करें। प्रागजी भगत ने केवल गुणातीतानंदस्वामी की ओर ही सतत् निगाह रखी.... मंदिर में इतना ठीक..... इतना ठीक नहीं.... फलां ऐसा–फलां वैसा.... यह अच्छा–यह बुरा.... कुछ भी नजर में नहीं लिया केवल एक गुरु गुणातीत को राजी करने की ही चाहना.... हम खाली हो जाएं.... खो जाएं। हम अपने अन्दर भरते ही रहते हैं जबकि खाली हो जाना है..... संत में खो जाना है। कोई ism में नहीं खोना। मन का आभास भी छोड़ देना है।

फिर सभा के बाद प.पू. गुरुजी की आज्ञा से पू. मल्कानी साहेब व पू. शीला आंटी, पू. अजय भईया व पू. सुष्मा भाभी ने 'होली' प्रज्जवलित करी और सभी भक्त प्रसाद लेकर, आनंद करके अपने-अपने घर की ओर रवाना हुए।

✡ ✡ ✡ ✡ ✡

स्वामी की बातें

410. धर्मादि से अधिक ध्यान और उससे अधिक ज्ञान व सत्पुरुष की मर्जी में रहकर उसे राजी करना—वह उससे भी अधिक है। यह एक में ही तीनों आ गए। भगवान् की महिमा जानने पर अपने आप सहज ही लगाव हो जाता है और लगाव होने पर मर्जी में रह जाते हैं। सो यह तो चिंतामणि हाथ आई है, उसे छोड़ना ही नहीं। देह को तो भगवान में जोड़ देना।

प्र- 5,192

411. भगवान तो बहुतों को मिले हैं, लेकिन ऐसी मजा किसी ने नहीं कराई और यह जोग बहुत दुर्लभ है। बार-बार ऐसा जोग नहीं बनेगा क्योंकि फिलहाल तो साक्षात् भगवान का जोग है और फिलहाल जो घड़ी या पल जा रही है, वह खूब दुर्लभ है। सो भगवान बिना और कुछ रखेगा, उसकी असद्गति होगी।

प्र-5,194

412. यह साधु अनादि मूल अक्षर हैं। उनमें दिव्यभाव मनुष्यभाव एक समझना। यह तो अजन्मा है, गर्भ में आए ही नहीं व उनकी रीत तो नट की माया के भांति समझनी। ये तो महाराज के संकल्प से यहां दिखाई देते हैं। अक्षरधाम से भी जो मुक्त को कसर टालने भगवान यहां लाए हों, उसे गर्भवास का दुःख भोगना तो पड़ता है व उसके गुणों को भगवान दबा रखते हैं तथा दोष को अधिक उभार कर केवल जीव जैसा बनाकर कसर टालते हैं। इसलिए ऐसे भक्त की व प्रथम लिखे इनकी रीत सरीखी नहीं समझना और जो भक्त को कसर टालने भगवान् साथ में लाए हों, उस भक्त को तो भगावन के आशरे का बल लेना।

प्र-5,195

413. महाराज ने बाईस वर्ष बाद स्वयं का स्वरूप जैसा है, वैसा कहा और हम बेबस हो जाते हैं।

प्र-5,196

व्रतोत्सवसूची

1. दि.	1.4.95	शनिवार	नवरात्रे प्रारंभ
2. दि.	9.4.95	रविवार	रामनवमी भगवान् श्री स्वामिनारायण जयंती
3. दि.	11.4.95	मंगलवार	एकादशी, व्रत
4. दि.	13.4.95	गुरुवार	बैसाखी
5. दि.	25.4.95	मंगलवार	एकादशी, व्रत

PUBLISHED BY PRABHAKAR RAO FOR YOGI DIVINE SOCIETY-DELHI
'ANIRDESH' Kakaji Lane, Swaminarayan Marg, Ashok Vihar-III, Delhi-110052 (India) Tel.: 7229327, 7249327
Printed at : **Chowdhry Mudran Kendra** 12/3, Sri Ram Marg, South Maujpur, Delhi-110 053